निपट निरंजन के काव्य में निर्गुण ब्रह्म की अभिव्यक्ति

डॉ.शीतल श्रीनिवास बियाणी
हिंदी विभागाध्यक्षा एवं सहयोगी प्रोफेसर
राजर्षी शाहू कला एवं विज्ञान महाविद्यालय वाळूज
तह. गंगापूर, जि. छत्रपती संभाजीनगर (महाराष्ट्र)
sheetalbiyani0610@gmail.com
मो.नं.- ८२०८४२५४६५

महाराष्ट्र के मराठवाडा विभाग को संतों की पुण्यभूमि कहा जाता है। विगत अनेक शतकों से इस पुण्यभूमि में बहुत बड़ी संख्या में साधु, संतों, महात्माओं, अवलिया फकिरों तथा सूफी संतों का आवागमन और सत्संग होते रहे हैं। अनेक महान विभूतियों के पावन चरणों की धूली से यह भूमि पवित्र हुई है। नाथों, सिद्धों और महान योगियों के उपदेशामृत के सिंचन से यह पवित्र भूमि पावन हो गई है। वैसे भी संसार के समस्त संतों की वाणी संपूर्ण जगत के लिए कल्याणकारी और हितकारी ही सिद्ध हुई है। ऐसे ही साधु, संतों में सत्रहवीं शताब्दी में संत कवि निपट निरंजन हुए हैं। आज से लगभग तीन सों वर्ष पहले उनका निर्वाण हो चुका था पर उनकी पुण्य स्मृति आज भी उनके सहस्त्रों भक्तों के अंतःकरण में चीर स्थायी रूप में स्थित है। कई चमत्कारिक कथाएँ उनके विषय में प्रसिद्ध हैं जिसके माध्यम से उनमें लोकोत्तर शक्तियों का होना सिद्ध किया जाता है। कविता के लिए उन्होंने कविता का सृजन नहीं किया। उनका लक्ष्य तो सत्य की खोज था। उनकी विचारधारा जीवनधारा के प्रवाह से भिन्न नहीं है। उसमें उनका जन-कल्याण का उद्देश्य घुला-मिला है। उनकी वाणी में बल है जो सुननेवालों के हृदय पर प्रभाव डालता है। अक्खड ढंग और फक्कड तरीके से कही गयी उनकी बेलाग वाणी में एक अलग तरह की मिठास है जो खरी-खरी बातें कहनेवालों की वाणी में ही मिल सकती है। उनकी सत्यभाषिता उनकी अद्भुत प्रतिभा का ही फल है।

निर्गुण ब्रह्म भाव :

निपट निरंजन के भाव विश्व के चिंतन में नाथ संप्रदाय का दार्शनिक रूप दिखाई देता है। निपट निरंजन जिस ब्रह्म का उल्लेख बार-बार करते हैं वह ब्रह्म वेदान्त के ब्रह्म के समान ही है। यही ब्रह्म इस संसार के रूप में सर्वत्र व्याप्त होता है। वह अगोचर, निर्गुण और निराकार है। उसका वर्णन करने में हमारी वाणी असमर्थ है। किंतु वहीं इस संसार में सर्वत्र व्याप्त है। संपूर्ण संसार में उसी की

सत्ता है। इस सत्य का ज्ञान केवल अनुभव द्वारा ही हो सकता है। डॉ. भालचंद्र तैलंग भी यही स्वीकार करते है कि, "नाथ संप्रदाय का अव्यक्त ब्रह्म निर्गुण, निराकार है, वह निरंजन है अर्थात् अंजन रूपी माया से विमुक्त है। परमतत्त्व रूप रेखा रहित नित्य स्वरूप है। अव्यक्त ब्रह्म को ही नाथ संप्रदाय में 'अविगत ब्रह्म' कहा गया है। अविगत ब्रह्म की सत्ता द्वैत एवं अद्वैत, साकार एवं निराकार भाव एवं अभाव से परे प्रतिपादित की गई है। नाथ संप्रदाय में ब्रह्म भावना शून्य द्वारा व्यक्त हुई है। गोरखनाथ ने कहा है 'शून्य निरंजन' के परिचय से योगी का चित्त स्थैर्य रूप प्राप्त करना है। वे 'सुनि निरंजन आपै आप' के द्वारा स्वयंभू आत्मरूप निरंजन ब्रह्म की शून्य रूप में स्थापना करते हैं।"१ इस कथन से स्पष्ट होता है कि नाथ संप्रदाय की परंपरा में आत्म तत्व ही शिव का रूप है और शिव तत्व अविद्या और अज्ञान से आच्छादित होने पर जीव रूप में व्यक्त होता है।

निपट निरंजन ने भी अपने एक पद में यही बात कही है। पद द्रष्टव्य है –

"जब नभ नहीं तब पवन निराकार में
शब्द सूत्र में से ही ओंकार में आया है।
अविगत प्रान वास निरंजन बीच आया।
ब्रह्माण्ड के पैले ब्रह्म सत्तनाम में समाया है।
गगन के पैले हंस सहज में वास करें,
अनूप के पैले सूत्र रंकार पाया है।
'निपट' काय के पैले जीव शिव में ही रहे,
जीव नहीं तब शिव निरंजन छाया है।"२

निपट भी यही कहते हैं शून्य रूपी शब्द में से ओंकार आया है। अविगत ब्रह्म ही सत्यनाम के रूप में ब्रह्मांड में समाया हुआ है। जब काया नहीं थी तब यह जीव शिव रूप में वर्तमान था क्योंकि शिव ही निरंजन है। परमशिव की अवस्था ही परमावस्था है। नाथ पंथीय योगियों का लक्ष्य ही है शिव और शक्ति का सामरस्य। यही अवस्था सहज समाधि अवस्था है। आत्मसाक्षात्कार ही नाथपंथानुसार परम पद की प्राप्ति है। योगी की देह ही योग देह है। चैतन्य शक्ति पर विजय प्राप्त कर ही योगी कालजयी कहलाता है। उस अविनाशी ब्रह्म को प्राप्त करना ही योगी का लक्ष्य है। योगियों की ब्रह्म भावना यद्यपि अद्वैत है पर कहीं कहीं उसका द्वैत रूप भी दिखाई देता है।

निपट निरंजन ने ब्रह्म का जो वर्णन किया वह उनके प्राप्त अनुभव के आधार पर ही है। वे स्वयं भक्ति साधना में ब्रह्म के रूप का साक्षात्कार करते हैं, उसी रूप में उसका वर्णन भी करते हैं।

यही उनकी आत्मसाधना है। ब्रह्म के भिन्न-भिन्न रूप के वर्णन का कारण यह है कि यह ब्रह्म तर्क और विवाद के ऊपर है। अनुभूति ब्रह्म मूलतः अद्वैत ही है और वह सृष्टि के कण-कण में व्याप्त है। वह हृदय में स्थित है। उसे संदेश भेजने की आवश्यकता नहीं।

निपट निरंजन की भक्ति का आलंबन अद्वैत की भावना के अनुकूल ही है। वह निर्गुण और निराकार होते हुए भी परिपूर्ण रूप से स्पष्ट है। सच्चे साधकों को ही उसका सच्चा रूप दिखाई देता है। निर्गुण भक्ति में साकार ब्रह्म के जो तत्व कहीं दिखाई देते हैं उसका कारण यह है कि वे कोरे भक्ति भाव के ही द्योतक नहीं है अपितु जन मन की भावना से भी प्रभावित है। वास्तव में निपट निरंजन की ब्रह्म भक्ति पीयुष सलिला भगीरथी के समान पवित्र है। जिसने पुलीत फूलों पर न जाने कितने भटकते भक्तों को विश्रांति मिली है।

नाथ संप्रदाय की मान्यता है कि ब्रह्म का ज्ञान दो प्रकार की विद्या से होता है। एक है परा विद्या और दूसरी है अपरा विद्या। परा विद्या सम्यक दर्शन में बड़ी सहायक सिद्ध होती है। जिसका एक मात्र लक्ष्य है मोक्ष। अपरा विद्या का लक्ष्य है ब्रह्मोपासना। इसी ब्रह्म उपासना से कर्म में वृद्धि होती है। कल्याण और सुख प्राप्त होते है और धीरे-धीरे मुक्ति भी मिल जाती है। सच्चा सिद्ध योगी इन दोनों में सामंजस्य स्थापित कर मोक्ष रूपी अंतिम लक्ष्य की प्राप्ति करता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी जी भी कहते हैं कि, "यह जो ब्रह्म की जानकारी है वह दो प्रकार की होती है। एक को ऊँची जानकारी या परा विद्या कहते है और दूसरी को घटिया जानकारी या अपरा विद्या। पहले प्रकार की जानकारी ठीक ठीक समझने में सहायक है, इसका एक मात्र फल मोक्ष है। दूसरी जानकारी का लक्ष्य ब्रह्मोपासना है। इससे कर्म-समृद्धि होती है सुख और अभ्युद्य प्राप्त होता है और धीरे-धीरे मुक्ति भी मिल सकती है। पहली विद्या का विषय परब्रह्म है, दूसरी का अपरंब्रह्म।"३ इस कथन से स्पष्ट होता है कि विद्या अर्थात ज्ञान के माध्यम से ही 'परब्रह्म' और 'अपरब्रह्म' का अनुभव प्राप्त होता है। इस संदर्भ में डॉ. श्यामसुंदरदास जी ने अपने ग्रंथ में अपने मत को व्यक्त करते हुए कहा है कि, "विश्वविस्तृत सृष्टि और ब्रह्म का संबंध दिखाने के लिए ब्रह्मवादी दो उदाहरण दिया करते हैं। जिस प्रकार एक छोटे से बीज के अंदर वट का बृहदाकार वृक्ष अंतर्निहित रहता है उसी प्रकार यह सृष्टिभी ब्रह्म में अंतर्निहित रहती है और जिस प्रकार दूध में घी व्याप्त रहता है उसी प्रकार ब्रह्म भी इस अंडकहाट में सर्वत्र व्याप्त रहता है।"४

इसी तरह यह भी कहा जाता है कि जो पिंड में हैं वही ब्रह्मांड में है। वास्तव में ब्रह्म लौकिक चीजों से बहुत परे है। वैयक्तिक रूप से की गई कठोर और उच्च साधना से ही उसकी प्राप्ति हो

सकती है, वह कभी भक्त के लिए चिंतित नहीं रहता क्योंकि भक्त भी ब्रह्म ही है। निराकार, निर्गुण की साधना करनेवाले योगी यही कहते है कि जिसका कोई आकार नहीं, उसकी मूर्ति का सहारा लेकर उसकी प्राप्ति का प्रयत्न करना वैसा ही है जैसे झूठ के सहारे संचतक पहुँचने का प्रयास। इसी निरा का ब्रह्म की प्राप्ति योगी का एक मात्र लक्ष्य है।

संदर्भ

1. डॉ. भालचंद्र तैलंग – मराठी संतों की हिंदी वाणी, पृ. 193
2. निपट निरंजन के पद्य नं. 7, सं. डॉ. तैलंग, पृ. 56
3. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी,कबीर,पृ. 111
4. सं. डॉ. श्यामसुंदर दास कबीर ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ,पृ 28
5. डॉ. भालचंद्र तैलंग,औरंगाबाद के हिंदी संत कवि निपट निरंजन
6. डॉ. राजमल बोरा,निपट निरंजन की बाणी,